ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-5* Issue-7* September- 2020
Innovation The Research Concept

क्रिया योग : जीवन ऊर्जा को नियंत्रित करने का मार्ग (पतंजलि योग दर्शन के परिपेक्ष्य में)

Kriya Yoga: The Way to Control Life Energy (In the context of Patanjali Yoga philosophy)

Paper Submission: 15/09/2020, Date of Acceptance: 25/09/2020, Date of Publication: 26/09/2020

बबिता
सहायक प्राध्यापक,
दर्शन शास्त्र विभाग,
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय,
हरिद्वार, उत्तराखंड, भारत

सारांश

मनुष्य जीवन के चार आयाम कहे गए हैं, भावना, बुद्धि, शरीर और ऊर्जा। योग की अगर हम बात करें तो योग जीवन के हर आयाम से जुड़ा हुआ है। भावना के सार पर भक्ति योग आता है। अगर हम बुद्धि की बात करें तो ज्ञान योग सामने आता है। शरीर की बात करें तो कर्म योग और जब हम जीवन उर्जा की बात करें तो क्रिया योग के बारे में जिज्ञासा होती है। क्रिया योग क्या है और उसका क्या महत्व है और ये सब महर्षि पंतजलि जी ने योग दर्शन के दूसरे पाद ''साधन पाद'' में स्पष्ट किया है। क्रिया योग अध्यात्म मार्ग पर जाने का बड़ा ही शाक्तिशाली मार्ग है। प्रस्तुत शोध लेख में क्रिया योग और उसके महत्व के बारे में विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

There are four dimensions of human life, namely, emotion, intelligence, body and energy. If we talk about yoga, then yoga is connected to every dimension of life. Bhakti yoga comes at the essence of emotion. If we talk about intelligence, then the knowledge of yoga comes to the fore. When it comes to the body, there is curiosity about Karma Yoga and when we talk about life energy, Kriya Yoga. What is Kriya Yoga and what is its importance and all this is explained by Maharishi Pantjali in the second leg of Yoga philosophy. Kriya yoga is the most powerful way to go on the spiritual path. The research article presented highlights in detail about Kriya Yoga and its importance.

मुख्य शब्द : क्रिया योग, तप, स्वाध्याय, ईश्वर, प्राणिधान, अविधा, क्लेश।
Kriya Yoga, Tapa, Swadhyaya, Ishwara, Pranidhan, Unconsciousness, Tribulation.

प्रस्तावना

महर्षि पतजंलि ने योग दर्शन में प्रथम अध्याय में समाहित चित वाले उत्तम कोटि के साधकों के लिए अभ्यास और वैराग्य को समाधि सिद्धि के उपाय के रूप में बताया है। लेकिन समाज के समाहित चित्त वाले पुरूष सभी नहीं होते प्रायः हमारे आस–पास विषय वासनाओं और राग–द्वेष से ओत–प्रोत मन वाले व्यक्ति ही बहुतायात मात्रा में पाये जाते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति को महर्षि पतजंलि जी ने विक्षिप्त चित्त वाले कहा है। ऐसे विक्षिप्त चित्त वाले व्यक्ति का अभ्यास और वैराग्य पर चल पाना असंभव होता है।[1] इसलिए पंतजलि योग दर्शन में ऐसी अवस्था वाले पुरूषों के लिए क्रिया योग की बात कही गई है। सबसे पहले क्रिया प्रधान तरीके द्वेष धीरे–धीरे ऐसे व्यक्तियों के मन से राग–द्वेष की अधिकता को कम किया जाता है[2] ताकि उनका चित्त धीरे–धीरे समाहित कोटि का हो जाए और समाधि की अवस्था को प्राप्त होने में सहायक अभ्यास– वैराग्य को अपना सके।

क्रिया योग

चित्त की निर्मलता का सहज उपक्रम ही क्रिया योग कहलाता है। जिसका चित्त समाहित नहीं होता वे साधक अभ्यास और वैराग्य का सेवन नहीं कर सकते।[3] जिनमें योग साधना की दृढ़ इच्छा है, किन्तु जिनका चित्त चंचल है, उन्हें कुछ कठोर साधना की आवष्यकता है। ऐसे अधिकारी मध्यम कोटि के साधक कहे जाते हैं। उन्हीं के लिए क्रिया योग की आवष्यकता होती है। क्रिया योग के बारे में महर्षि पतंजलि कहते हैं कि

तपः स्वाध्यायेष्वरप्राणिधानानि क्रियायोग, योगसूत्र (2/1)

अर्थात तप, स्वाध्याय एव ईश्वर प्राणिधान ये तीनों ही क्रिया योग कहलाती हैं।

स्वामी विवेकानन्द क्रिया योग के सन्दर्भ में कहते हैं – समाधिवाद में जिन समाधियों की बात कही गई है, उन्हें प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है, इसलिए हमें धीरे–धीरे विभिन्न सोपानों में से होते हुए उन सब समाधियों को प्राप्त करने का प्रयत्न करना होगा।[4] इससे पहले सोपान को क्रिया योग कहते हैं।

भगवान श्री कृष्ण जी ने गीता में क्रिया योग को ही कर्मयोगग की संज्ञा दी है।[5] ''वे कहते हैं जो मुनि योगमार्ग में आरूढ़ होने की इच्छा रखता है इसके लिए कर्म अर्थात क्रियायोग ही प्रथम उपाय है।

आरूरूक्षोमनेयोग कर्म कारणमुच्यते।
योगरूढ़स्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते।
गीता 6/2

क्रिया योग एक समग्र योग है। क्रिया योग की यह भी विषेषता है कि इसमें शारीरिक तथा मानसिक क्रियाएं किसीर अन्य साधकों की क्रियाओं का व्याघात नही करती। शान्त, एकान्त स्थान में अज्ञातवास करके भी साधक इनका अनुष्ठान कर सकता है। दूसरी बात यह है कि क्रियायोग की क्रियाएं बन्धन में डालने वाली नहीं अपितु संसार बन्धन को षिथिल करने वाली होती है।
क्रियायोग की क्रियाओं का वर्णन इस प्रकार हैः–

तप

मूल शब्द 'तप' है जिससे तपस बना है। इसका शाब्दिक अर्थ है– प्रज्जवलित करना, जलना, चमकाना, कष्ट सहना अथवा उष्णता से जलना।[6] इसलिए इसका अर्थ है, जीवन में एक निष्चित ध्येय की प्राप्ति के लिए किन्हीं भी स्थितियों में सतत् अथक प्रयत्न। इसमें पवित्रता, आत्मसंयम और कठिन तपस्या समाविष्ट है।
क्षुधा–पिपासा, शीत–उष्ण, सम्पत्ति–विपत्ति, सुख–दुख तथा मान–अपमान आदि द्वन्द्वों को समान भाव से सहते हुए एक रूप रहने का अभ्यास करना तप कहलाता है। तप योगसाधक के लिए सर्वाधिक उपादेय है।[7] भाष्यकार व्यास देव कहते हैं किः–

नातपस्विनो – योगः सिध्यति। व्यासभाष्य (2/1)

अर्थात अतपस्वी को योग सिद्ध नही हो सकता। उसके लिए तो समत्व प्राप्त चित्त ही समर्थ हो सकता है। दुर्बल पुरूष चितवृतियों का विरोध करने में समर्थ नहीं हो सकता।

महर्षि व्यास तप को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि – तपो द्वन्द्व सहनम अर्थात द्वन्द्वदो को सहन करना ही पत है। [8]

तप के भेद

तप गुण भेद तीन प्रकार का है – सात्विक, शारीरिक ओर तामसिक तप।

सात्विक तप

श्रद्धापूर्वक फल की आकांक्षा से रहित पुरूषों के द्वारा जो तप किया जाता है वह सात्विक तप कहलाता है।

श्रद्वया परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरैः
अफलाकांक्षाभिर्युक्तैः सात्विक तपउ च्यते।
(गीता 17/17)

राजस तप

जब मनुष्य सत्कार और सम्मान प्राप्त करने के लिए तथा दूसरों से पूजित और प्रतिष्ठित होने के लिए दम्भपूर्वक तप करता हे तो वह तप राजस कहलाता है।[9]

सत्कारमानपूजार्थ तपो दम्भेल चैव यत्।
क्रियत तदिह प्रोक्तं राजसं चलम्ध्रुवम्
(गीता 17/13)

तामस तप

मूढ़ग्राहेणात्मनो यत्पीडया क्रियते तपः।
परस्योत्सादनार्थ वा ततामसमुदाहतम्।।
(गीता 17/19)

अर्थात जो तप अपने शरीर को पीड़ा पहुंचाकर अथवा दूसरों की हानि करने के लिए मूढ़तापूर्वक किया जाता है वह तप तामस कहलाता है।[10]
तामस तप सबसे भयानक है क्योंकि वह क्रोध पूर्वक किया जाता है यद्यपि इसमें संवेग की तीव्रता अधिक होती है। इसी कारण इसका प्रभाव सद्यः होता है। किन्तु यह तप योग में सर्वथा अनुपयोगी है।

शरीर वाणी और मन की दृष्टि से तप के पुनः तीन भेद हैं। शरीरिक तप, वाचिक तप और मानसिक तप।[11]

शारीरिक तप

देवद्विजगुरूप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम्
ब्रहमचर्यमहिंसा च शरीरं तप उच्यते।

अर्थात देव ब्राहमण, गुरू और विद्वान पूरूषों की पूजा करना, शारीरिक पवित्रतता, सरलता, ब्रहमर्य और अहिंसा का पालन करना यह शारीरिक तप कहलाता है।

वाचिक तप

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यम् प्रियहितम् च यत्।
स्वाध्यायाभ्यसन् चेव वाड्मयं तप उच्यते।।
(गीता 17/15)

किसी भी प्राणी के मन में जो उद्वेग नही करते तथा सत्य, प्रिय तथा हितकारी जो वचन है, ऐसे वचनों को बोलना एवं स्वाध्याय का अीयास करना वाणी का तप है।[12]

मानस तप

मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः।
भावसंषुद्धिरित्येततपो मानसमुच्यते।।
(गीता 17/16)

मन का प्रसाद अर्थात मन की स्वच्छता का सम्पादन, सौम्यता अर्थात मुखादि को प्रसन्न करने वाली अनतकरण की शुद्धवृति, मौन अर्थात् अनतःकरण का संयम, मन का न्रिह तथा भावषुद्धि यह मानस तप कहलाता है।[13]

स्वाध्याय

क्रिया योग का दूसरा साधन स्वाध्याय है स्वाध्याय का अर्थ परमात्मा के पवित्र का जप तथा मोक्षोपयोगी शास्त्रों का अध्ययन।[14]

स्वाध्याय

प्रणवादिपवित्राणां जपो मोक्षषास्त्राध्ययनं वा।
(व्यास भाष्य 2/1)

ओम परमात्मा का सबसे पवित्र नाम है। यह सफल शास्त्रों का ओर त्रैलोक्य का साररूप है। ओंकार की तीन मात्रायें अकार, और मकार क्रमषः जाग्रत्, स्वपन और सषुति इन तीन अवस्थाओं के नामांतर है। ओंकार का नित्य जप लौकिक, अभ्युदय तथा आध्यात्मिक कैव्लय को प्रदान करता है।

स्वाध्याय का अर्थ एवं स्वरूप

स्व का अर्थ है स्वयं अध्याय का अर्थ, अध्ययन या षिक्षण है। व्यक्ति के अन्दर जो उत्तम है उसे प्रकट करना षिक्षण है इसलिए स्वपाध्याय आत्म अध्ययन है।[15]

स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार – प्रत्येक वस्तु के सब पहलू देखकर विचार करना इस विचार का अन्त होने पर वह किस एक सिद्धान्त पर पहुँचता है।[16]

ईश्वर प्राणिधान

ईश्वर प्राणिधान क्रियायोग का ततृतीय साधन है प्रथम पाद में 'ईश्वरप्राणिधानद् वा' इस सूत्र में ईश्वरप्राणिधान का जो अर्थ भाष्यकार ने किया था, उससे कुछ विलक्षण अर्थ इस क्रियायोग के ईश्वरप्राणिधानं का है।

आचार्य श्री राम शर्मा इसको स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि 'ईश्वरप्राणिधान में पूजा, अर्चना के क्रिया, कृत्य ही नहीं आते। उसका वास्तविक स्वरूप सर्वव्यापी है, कर्मफल में निष्पक्ष न्यायधीष जैसी स्थिति के परमेश्वर के अनुषासन का ठीक तरह से पालन करना।[17]

क्रियायोग की प्रासगिकता

क्रियायोग की ममहिला का वर्णन महर्षि पतंजलि ने बहुत ही अच्छे क्रम से प्रस्तुत किया है। पांतजल योग सूत्र में दूसरे अध्याय के दूसरे श्लोक में वर्णन है कि

समाधिभावनार्थः क्लेषतनूकरणार्थष्च। (यो0 सू0 2/2)

अर्थात् क्रियायोग समाधि की प्राप्ति करने वाला और क्लेषों को कम करने वाला है।[18] परन्तु यहां पर यह ध्यान रखना चाहिए कि, क्रियायोग से समाधि की केवल उत्पति होती है, उसकी सिद्धि नहीं होती। सिद्धि तो अभ्यास और वैराग्य से ही होगी।

व्यास भाष्य के अनुसार क्रिया योग, भलिभांति आचरित होने पर समाधि अवस्था को उत्पन्न करता है और सब क्लेषों को प्रकृष्ट रूप से क्षीण करता है।[19]

स्वामी हरिहरानंद के अनुसार – क्रियायोग से अषुद्धि का क्षय होता है।

स्वामी ओमानंद के अनुसार– अविधा, आदि क्लेष जिनके संस्कार बीज रूप से चित्तभूमि में अनादि काल से पड़े हुए हैं उनको शिथिल करने और चित्त को समाधि के योग्य बनाने हेतु किया जाता है।

तप का महत्व

तप से शरीर, मन और चरित्र की शक्ति का विकास होता है। तप से साहस, ज्ञान, स्थिरता, खरापन और सादगी जैसे गुणों का समावेष होता है।[20] तप के बिना जीवन प्रेमहीन हृदय के समान है तप के परिणाम के बारे में महर्षि पंतजलि कहते हैं कि –

कायेन्द्रियसिद्विरषुद्विक्षयात्तपसः (यो0सू0 2/43)

अर्थात तप के आचरण से अषुद्धि का क्षय होने के कारण शरीर और इन्द्रियों की सिद्धि होती है।

स्वाध्याय का परिणाम

स्वाध्याय के फल रूप में महर्षि पंतजलि के इष्ट और देवता की उपलब्धि का वर्णन किया है।

स्वध्यायादिष्ट देवतासंप्रयोगः (2/44)

अर्थात् स्वाध्याय से अपने इष्ट देवता का सम्यक रूपेण साक्षात्कार हो जाता है।[21]

छान्दोग्योपनिषद में स्वाध्याय की महता का वर्णन इस प्रकार है–

त्रयोधर्मस्कंधा याज्ञोध्ययन दानमिति (2/23/1)

अर्थात धर्म के तीन स्कन्ध हैं – यज्ञ, स्वाध्याय, और दान श्री मद्भगवद्गीता में स्वाध्याय की महत्ता बताते हुए भगवान कहते हैं–

न हि ज्ञानेन सदृषं पवित्रमिहं विधाते

तत्स्वययोगसंसिद्ध. कालेनात्मानि विदन्ति (4/38)

निःसन्देह रूप में इस संसार में ज्ञान के साधन पवित्र करने वाला कुछ भी नहीं है।

ईश्वर प्राणिधान का महत्व

ईश्वर प्राणिधान का फल समाधि बताया गया है।

समाधिसिद्विरीष्वर प्राणिधानात (2/45)

अर्थात् ईश्वर प्राणिधान से समाधि सिद्ध होती है।

व्यास भाष्य के अनुसार – ईश्वरार्पित सर्वभावस्य समाधिसिद्विर्यया

अर्थात ईश्वर में सर्वभावर्पित योगी को समाधि सिद्धि होती है।[22]

आचार्य श्री राम शर्मा के अनुसार – ईश्वर को मन–मंदिर में स्थापना कर लेने के बाद मनुष्य सत्कर्मों में ही प्रद्रत रह सकता है अपने अन्दर सात्विक गुणों को ही स्थान दे सकता है।

ईश्वर प्राणिधान के द्वारा साधक धीरे–धीरे मोहमाया से ऊपर उठकर अपनी समस्त भावनाओं को भगवान में निहित कर देता है, जिसके परिणाम स्वरूप व्यूत्वानभूमि की चित्तवृत्तियों के उत्पन्न होने की सम्भावना नही रहती।[23]

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में यह कह सकते हैं कि क्रिया योग में तप स्वाध्याय व ईश्वर प्राणिधान सम्मिलित रूप से है, इसका अर्थ है स्वयं के चिंतना, चरित्र, व्यवहार को परिष्कृत कर अंत में ईश्वर को सभी कर्म समर्पित करना। इसको करने पर ही क्रिया संपन्न होता है। हमारी इन्द्रियां संयमित होती है और उस में निर्मल चित्त प्राप्त होता है। अतः योग ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा समाधि की अवस्था तक पहुंचा जा सकता है और अविधा आदि क्लेषों का क्षय होता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *शास्त्री डॉ0 विजय पाल, योग विज्ञान प्रदीपिका ;2016द्ध द्वितीय संस्करण, सत्यम् पब्लिषिंग हाउस।*
2. *कुलश्रेष्ठ डॉ0 असीम पांतजल योग सूत्र और वैज्ञानिक अध्यात्म ;2014द्ध प्रथम संस्करण, सत्यम् पब्लिषिंग हाउस।*
3. *रावत डॉ0 अनुजा, योग और योगी ;2016द्ध प्रथम संस्करण, सत्यम् पब्लिषिंग हाउस।*

4. तीर्थ श्री स्वामी ओमानंन्द पांतजलयोग प्रदीप ;2000द्ध तैतीसवा संस्करण गीता प्रैस, गोरखपुर।
5. उधम सिंह, क्रियायोग समग्र व्यक्तित्व विकास, गुरूकुल शोध भारती ;2013द्ध षणमासिकी शोधपत्रिका।
6. अरण्य स्वामी हरिहरानन्द, पांतजल योग दर्शनम् ;2003द्ध द्वितीय संस्करण, मोतीलाल बनारसी दास पब्लिकेषन्स।
7. गोयन्दका हरिकृष्णदास महर्षि पंतजलिकृत योग–दर्शन, गीताप्रेस, गोरखपुर।
8. आचार्य श्री राम शमर्मा, सपाख्य एवं योगदर्शन (2000) परिमल पब्लिकेषन्स।
9. प्रौ0 त्रिलोक्यचन्द, ईश्वरप्राणिधान व उसका महत्व, गुरूकूल शोधभारती, षणमासिकी शोध प्रत्रिका।
10. स्वामी रामदेव, योग दर्शन, दिव्य योग मन्दिर ट्रस्ट, कृपालु बाग आश्रम, कनखल, हरिद्वार।

अंत टिप्पणी

1. रामदेव स्वामी, पातंजलि प्रणीत योग दर्शन, पृ0 सं0–39
2. वही, पृ0 सं0 39
3. डॉ0 विजय पाल, शास्त्रीयोग विज्ञान प्रदीपिका, पृ0 सं0 85
4. वही पृ0 सं0 157
5. डा0 विजयपाल शास्त्री, योग विज्ञान प्रदीपिका पृ0 सं0 87
6. डॉ0 अनुजा रावत, योग और योगी पृ0 सं0 157
7. डॉ0 विजय पाल शास्त्री योग विज्ञान प्रदीपिका पृ0 88
8. उधम सिंह, किया योग समग्र व्यक्तित्व का विकास गुरूकुल शोधभारती, पृ0 सं0 139
9. डॉ0 विजय पाल शास्त्री योग विज्ञान प्रदीपिका पृ0 89
10. डॉ0 विजय पाल शास्त्री योग विज्ञान प्रदीपिका पृ0 89
11. डॉ0 विजय पाल शास्त्री योग विज्ञान प्रदीपिका पृ0 89
12. डॉ0 विजय पाल शास्त्री योग विज्ञान प्रदीपिका पृ0 89
13. डॉ0 विजय पाल शास्त्री योग विज्ञान प्रदीपिका पृ0 89
14. डॉ0 विजय पाल शास्त्री योग विज्ञान प्रदीपिका पृ0 89
15. डॉ0 अनुभा रावत योग और योगी, पृ0 सं0 159
16. वही
17. डॉ0 विजय पाल शास्त्री योग विज्ञान प्रदीपिका पृ0 94
18. डॉ0 विजय पाल शास्त्री योग विज्ञान प्रदीपिका पृ0 94
19. डॉ0 अनुजा रावत, योग और योगी, पृ0 सं0 161,162
20. वही, पृ0 सं0 158
21. वही, पृ0 160
22. वही, पृ0 160
23. प्रोफेसर त्रिलोक चन्द ईश्वर प्राणिधान का महत्व, गुरूकुल शोधभारती, पृ0 सं0 90